

सुब्रमणी एवं अन्य

बनाम

तमिलनाडु राज्य

28.08.2002

[न्यायाधिपतिगण एन.संतोष हेगड़े एवं बीपी सिंह]

दंड संहिता, 1860; धारा 34, 96, 99, 103, 147, 148, 149, 302, 304 भाग I, 324, 326 एवं 447

हत्या का आरोप, गंभीर उपहृति कारित, आपराधिक अतिचार-दोषसिद्धि-उच्च न्यायालय ने अभियुक्तगण को उनके आत्मरक्षा के अधिकार का उल्लंघन करने का दोषी पाया और उन्हें धारा 304 भाग 1 सपठित धारा 34 के तहत दोषी ठहराया, लेकिन उन्हें आपराधिक अतिचार के आरोपों से बरी कर दिया क्योंकि विवादित भूमि अभियुक्तगण के कब्जे में थी-अभिनिर्धारित, क्योंकि अभियुक्तगण को व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करने के आधार पर हत्या करने के आरोपों से बरी कर दिया गया था और यह पता नहीं लगाया जा सका कि किस अभियुक्त ने ऐसे अधिकार का अतिलंधन किया, उन सभी को संदेह का लाभ दिया गया- इसलिए आरोपों से दोषमुक्त किया गया।

आत्मरक्षा का अधिकार-अतिलंधन-अभिनिर्धारित, अभियोजन पक्ष संपत्ति के सुस्थापित कब्जे में नहीं- अभियुक्तगण के कब्जे काशत की भूमि

पर अतिचार एवं उन पर हमला करना; अभियुक्तगण के मारमिक अंगों पर चोटें लगना-इन परिस्थितियों में, अभियोजन पक्ष के सदस्य आक्रामक रहे इसलिए अभियुक्तगण को उचित आशंका हुई- संपत्ति और शरीर की व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करने में अधिक बल का प्रयोग करना साबित हुआ-उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष के अभाव में कि किस अभियुक्त ने बल के प्रयोग का अतिलंघन किया, सभी दोषसिद्ध अभियुक्तगण को संदेह का लाभ दिया गया और आरोपों से बरी कर दिया गया।

शब्द और वाक्यांश;

‘सुस्थापित कब्जा - का अर्थ।

अभियोजन के अनुसार, पीड़ित/मृतक ने तथाकथित भूखण्ड खरीदा। अभियुक्त-अपीलार्थी संख्या 1, उसी भूखण्ड पर काश्त कार थे, ने पीड़ित/मृतक को भूखंड का कब्जा देने में बाधा उत्पन्न की। पंचायत ने मामले में दखल देते हुए अपीलार्थी संख्या 1 द्वारा भूमि की कीमत दिए जाने पर आधी भूमि अपीलार्थी को दिए जाने व शेष आधी पीड़ित/मृतक के पास बने रहने के निर्देश दिए। परंतु अपीलार्थी संख्या 1 ने भूखंड की राशि अदा ना कर संपूर्ण भूखंड पर कब्जा बनाए रखा। पीड़ित/मृतक ने उस भूखंड को जोतने का प्रयास किया परंतु अपीलार्थी संख्या 1 ने विरोध किया। अगले दिन मृतक ने अपने पुत्र, पुत्रियों (पीडब्ल्यू 2 व पीडब्ल्यू 3)

तथा दामाद (पीडब्ल्यू 1) के साथ जाकर जमीन को जोतना प्रारंभ किया। तब अपीलार्थी संख्या 1 से 4 हथियारों से लैस होकर तथा अभियुक्त संख्या 5 व 6 ने बिना हथियारों के पहुंचकर विरोध किया। अपीलार्थी संख्या 1 से 4 ने हथियारों से पीड़ित पर हमला किया और अभियुक्त संख्या 5 व 6 ने घूंसें से प्रहार किया व गवाहों व मृतक/पीड़ित के पुत्र के साथ भी मारपीट की। पीड़ित/मृतक खून आलूदा चोटें आईं जिसे राजकीय अस्पताल में भर्ती कराया गया जहां कुछ समय पश्चात् उसकी मृत्यु हुई। अपीलार्थी संख्या 2 भी उसी अस्पताल में भर्ती हुआ। दोनों गवाहों व अपीलार्थी संख्या 2 के बयानों के आधार पर एफआईआर दर्ज हुई।

विचारण न्यायालय ने अपीलार्थीगण को दोषी मानते हुए अपीलार्थी संख्या 1 व 2 को भ०द०स० की धारा 302 व अपीलार्थी संख्या 3 व 4 को धारा 302/34 में दोषसिद्ध किया साथ ही अपीलार्थीगण को धारा 324, 326 व 447 भ०द०स० के अपराध में दोषी पाया। यद्यपि अभियुक्तगण संख्या 5 व 6 को दोषमुक्त किया।

अपील पर, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थीगण को उनके व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिक्रमण करते हुए मृतक व गवाहों को गंभीर उपहृतियां कारित करने का दोषी मानते हुए धारा 304 भाग 1 सपठित धारा 34 भ०द०स० में दोषसिद्ध किया, परंतु धारा 447 भ०द०स० के

आरोप से यह कहते हुए दोषमुक्त किया कि अपीलार्थीगण विवादित भूमि पर कास्त करने के आधार पर काबिज थे। यद्यपि धारा 324 व 326 भ०द०स० में उनकी दोषसिद्धि को संपुष्ट किया इसलिए यह अपील प्रस्तुत हुई।

अपीलार्थीगण की ओर से यह तर्क दिया गया कि अभियोजन पक्ष ने अग्रेसर के रूप में झगड़े का प्रारंभ किया। चूंकि वे अपीलार्थीगण को उनके 50 वर्षों से कब्जे कास्त की भूमि से उन्हें बेकब्जा करना चाहते थे। अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थीगण के, मार्मिक अंगों में चोट पहुंचाकर उनके जीवन पर खतरे की शंका उत्पन्न करते हुए उकसाया; जिस पर अपीलार्थीगण ने मृतक व गवाहों के विरुद्ध संपत्ति व शरीर की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए; बल का प्रयोग किया और इसलिए अभियोजन पक्ष सारवान तथ्यों को छिपाने का दोषी था।

प्रत्यर्थी राज्य, की ओर से तर्क दिया गया कि अभियोजन पक्ष ने भूखंड पर अतिक्रमण कर लिया था इसलिए अपीलार्थीगण भूखंड पर अपने कब्जे का दावा नहीं कर सकते हैं; और यह स्पष्ट नहीं है कि हमला किसने शुरू किया इसलिए अपीलार्थीगण को प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार उत्पन्न नहीं हुआ।

अपील स्वीकार करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया

1.1. अभियोजन पक्ष ने घटना की उत्पत्ति एवं उदभव के कारण को दबाने व न्यायालय के समक्ष तोड़मरोड़ कर वृत्तांत पेश करने का फैसला किया। अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थीगण को लगी चोटों के बारे में अनभिज्ञता जाहिर की। यह सुस्थापित है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 105 के तहत अभियुक्त व्यक्ति पर अपने बचाव की दलील को साबित करने का भार है, जो उतना कठिन नहीं है जितना कि अभियोजन पक्ष पर अपराध के हर घटक को साबित करने का होता है, जिसका अभियुक्त पर संदेह से परे आरोप लगाया गया है। हस्तगत मामले में अपीलार्थीगण के मार्मिक अंगों पर चोटें आईं जिनका स्पष्टीकरण अभियोजन पक्ष देने में विफल रहा। मामले के तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए अभियोजन पक्ष द्वारा ऐसी चूक यह निष्कर्ष निकालती है कि अभियोजन पक्ष घटना की उत्पत्ति और उद्गम के तथ्य को छिपाने का दोषी है इसलिए उसने सही वृत्तांत प्रस्तुत नहीं किया है। यह संभव हो सकता है कि अभियोजन पक्ष के गवाह किसी महत्वपूर्ण बिन्दु के विषय में झूठ बोल रहे थे इसलिए स्वयं का अविश्वसनीय बना रहे थे और यह भी हो सकता है कि अभियुक्तगण के शरीर पर आई चोटों के कारणों के बारे में बचाव पक्ष का स्पष्टीकरण घटना के विषय में संभवतया सही वृत्तांत होने से अभियोजन पक्ष के मामले पर गंभीर संदेह उत्पन्न करता है। (731-सी-एफ)

1.2. अपीलकर्ताओं का इरादा पीड़ित की मृत्यु कारित करना नहीं था परंतु उन्होंने अपने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए कार्य किया। प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए अपीलार्थीगण का अपराध करने का कृत्य, सामान्य आशय से प्रेरित नहीं कहा जा सकता है। सामान्य आशय की प्रासंगिकता केवल अपराध करने के लिए है ना की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के लिए। अपीलार्थीगण ने प्रारंभ में संपत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार तथा बाद में शरीर की व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए कार्य किया। यह भी पाया गया कि अपीलार्थीगण में से तीन लोग उसी घटना में चोटिल हुए। दो अपीलार्थीगण, अपीलार्थी संख्या 2 व 3 के सिर पर जो कि शरीर का मार्मिक अंग थे में चोटें आईं। यद्यपि वे चोटें प्राणघातक नहीं थीं परंतु स्पष्ट तथ्य यह है कि उनके शरीर के मार्मिक अंगों पर हमला किया गया इन परिस्थितियों में, यह निष्कर्ष निकालना तर्कसंगत है कि अपीलार्थीगण ने यह उचित आशंका जताई है कि इस तरह के हमले का परिणाम मृत्यु या गंभीर उपहति हो सकता है। इसलिए व्यक्तिगत प्रतिरक्षा का अधिकार स्वेच्छा से हमलावरों की मृत्यु कारित करने तक बढ़ गया। (729-डी-जी)

बिहार राज्य बनाम माथु पाण्डेय व अन्य, एस.सी.आर (1970) 1
358, पर आधारित

1.3 यह सुस्थापित विधि है कि व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते समय केवल उतने बल का प्रयोग किया जा सकता है जितना आवश्यक हो, लेकिन ऐसे समय में जब किसी व्यक्ति को अपने या किसी अन्य के जीवन और अंग के आसन्न खतरे का सामना करना पड़ता है तो खतरे को टालने के लिए आवश्यक सटीक बल के इस्तेमाल के लिए उससे स्वर्णिम तराजू में तौलने की उम्मीद नहीं की जा सकती है। भले ही वह क्षणभर के आवेश में, वह अपनी प्रतिरक्षा को, जो शांत व नियंत्रित दिमाग से सटीकता के साथ आंकलन करने से थोड़ा अधिक आगे तक ले जाता है, कानून इसके लिए उचित अनुमति देता है। (729-एच;730-ए,बी)

मोहम्मद रमजानी बनाम दिल्ली राज्य 1980 सप्लीमेंट्री एस.सी.सी 215; मुंशीराम व अन्य बनाम दिल्ली प्रशासन, एआईआर 1968 एससी 702 एवं पूरणसिंह व अन्य बनाम पंजाब राज्य (1975)4 एससीसी 518, का अवलंब लिया।

1.4 उच्च न्यायालय ने पाया कि अपीलार्थीगण ने अपने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग किया, लेकिन उस अधिकार का अतिलंघन किया। हालांकि उच्च न्यायालय ने यह विचार नहीं किया कि अपीलार्थीगण में से किसने, यदि कोई हो, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिलंघन किया है। इसके अतिरिक्त निजी प्रतिरक्षा के अधिकार का उदारतापूर्वक

अर्थान्वयन किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष के अभाव में किस अपीलार्थी ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अपने अधिकार का अतिलंघन किया है, इसका लाभ सभी को मिलना चाहिए। (732-बी,ई)

मुंशीराम व अन्य बनाम दिल्ली प्रशासन, एआईआर (1968) एससी 702, को संदर्भित किया।

2. मामले के तथ्य व परिस्थितियों के तहत, यह नहीं कहा जा सकता है कि विवादित भूमि पर अभियोजन पक्ष के सदस्यों का कब्जा था या अपीलार्थीगण को अतिक्रमियों को बेदखल करने का और भूमि पर कब्जा करने के अपने अधिकार का दावा करने का कोई अधिकार नहीं था। निश्चित रूप से अभियोजन पक्ष भूमि के स्थापित कब्जे में नहीं था।

3. जब एक बार यह अभिनिर्धारित कर दिया गया कि अपीलार्थीगण ने अपने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिलंघन नहीं किया, तो, तार्किक रूप से यह मानना चाहिए कि उन्हें धारा 324 व 326 भा0द0स0 के तहत तुलनात्मक रूप से छोटे, अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है क्योंकि एक ही संव्यवहार में अपनी व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए उन्होंने अभियोजन पक्ष के गवाहों के चोटें कारित की। (732-ई-एफ)

दाण्डिक अपीलीय क्षेत्राधिकार; आपराधिक अपील संख्या 1255/2001

चेन्नई उच्च न्यायालय के आपराधिक अपील संख्या 602/ 1992 के निर्णय और आदेश दिनांक 17.04.2001 में उत्पन्न

के.वी. विश्वनाथन, बी. रघुनाथ, कुंवर, अजीत मोहन सिंह व के.वी. वेंकटरमण, अपीलार्थीगण की ओर से

एस. बालाकृष्णन, सुश्री रेवती राघवन व श्री नारायण झा, प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति बी.पी. सिंह द्वारा दिया गया।

विशेष अनुमति द्वारा यह अपील मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णय व आदेश दिनांकित 17.04.2001, 1992 की आपराधिक अपील संख्या 602 के विरुद्ध निदेशित है। इस अपील में चार अपीलार्थी हैं। अपीलार्थी संख्या 1, सुब्रह्मण्यम शेष अपीलार्थी, वेंकटेशन (अपीलार्थी संख्या) 2; गणेशन (अपीलार्थी संख्या 3) व गोविंद राज (अपीलार्थी संख्या 4) के पिता हैं। उन्होंने उच्च न्यायालय के निर्णय व आदेश पर आपत्ति जताई है, जिसके तहत धारा 302 व 302/34 भा०द०स० के तहत उनकी सजा को अपास्त करते हुए; उच्च न्यायालय ने उन्हें आत्मरक्षा के अधिकार का अतिलंघन करने के कारण 304 पार्ट I सपठित धारा 34 भा०द०स० के अपराध का दोषी पाया। साथ ही उच्च न्यायालय ने अपीलार्थीगण को धारा 324, 326 भा०द०स० के अपराध का भी दोषी पाया। यद्यपि उच्च

न्यायालय ने विवादित भूमि पर उनके खातेदारी के होने के कारण आपराधिक अतिचार का दोषी नहीं पाते हुए उन्हें धारा 447 भा०द०स० के आरोप से दोषमुक्त किया। इसलिए मामले के तथ्य व परिस्थितियों के तहत उन्हें आपराधिक अतिचार के अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता था। इसमें अपीलार्थीगण के अलावा दो अन्य अभियुक्तगण संख्या 5 व 6 को 1992 के सेशन केस संख्या 46 द्वारा धारा 302, 302/34, 324, 326, सपठित धारा 149, 147, 148, 447 की सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण हुआ। यद्यपि अभियुक्त संख्या 5 व 6 के विरुद्ध कोई साक्ष्य नहीं पाते हुए उन्हें सेशन न्यायालय ने दोषमुक्त किया, परंतु अपीलार्थीगण को भा०द०स० की विभिन्न धाराओं के तहत दोषसिद्ध किया जाकर विभिन्न अवधि के कारावास के दण्ड की सजा सुनाई। अपीलार्थीगण संख्या 1 व 2 को धारा 302 भा०द०स० व अपीलार्थी संख्या 3 व 4 को धारा 302/34 भा०द०स० के तहत विचारण न्यायालय ने दोषसिद्ध किया व आजीवन कारावास का दण्ड दिया। सभी अपीलार्थीगण को धारा 447 भा०द०स० के अपराध का दोषी पाया जिसके लिए उन्हें तीन माह के कठोर कारावास से दंडित किया। अपीलार्थी संख्या 1 व 3 को धारा 324 व 326 भा०द०स० के अपराध का दोषी पाते हुए क्रमशः दो वर्ष व पांच वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड उक्त धाराओं में दिया। अपीलार्थी संख्या 2 व 4 को धारा 324

भा0द0स0 के अपराध का दोषी मानते हुए दो वर्ष के कठोर कारावास का दण्ड दिया।

इस अपील के उद्भूत होने वाली घटना कथित तौर पर 20,अप्रैल 1991 को हुई थी। अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि मृतक जयवेलु ने रेणुकापुरम में सर्वे नं. 56/1 में 1.83 एकड़ जमीन मुरुगेसा मुदिल्यार व सावित्री से खरीदी थी। तथापि, अपीलार्थी संख्या 1 उक्त भूमि का काश्तकार व खातेदार था। मृतक को भूमि का कब्जा देने में बाधा डाल रहा था जिसने इस भूमि को खरीदा था। पंचायत की बैठक बुलाई गई जिसमें निर्णय लिया गया कि आधी भूमि मृतक खरीददार के पास रखी जानी चाहिए और बाकी आधी अपीलार्थी सं. 1 को दी जानी चाहिए, जिसे तीन महीने के भीतर इसकी कीमत चुकानी होगी। अपीलकर्ता सं. 1 ने भूमि के आधे हिस्से की कीमत का भुगतान नहीं किया और पूरे भूखण्ड का कब्जा जारी रखा। 19 अप्रैल 1991 को शाम को मृतक ने उक्त भूखण्ड को जोतने का प्रयास किया, जो अपीलार्थी सं. 1 के कब्जे में था, लेकिन अपीलार्थी सं. 1 ने विरोध किया, जिससे मृतक को उस भूमि को जोतना बन्द करने के लिए मजबूर होना पड़ा। इस घटना के बाद मृतक फरार हो गया। हालांकि 20 अप्रैल 1991 की सुबह लगभग 6:00 बजे, पीडब्ल्यू 1, 2, 3 व सिकमनी के साथ मृतक के साथ जाकर फिर से जमीन को जोत कर कृषि कार्य शुरू किया।

पीडब्ल्यू 2 व 3 मृतक की पुत्रियां थी तथा सिकमनी (जो परीक्षित नहीं हुआ) उसका पुत्र था पीडब्ल्यू 1, पीडब्ल्यू 2 का पति था। जब सिकमनी जमीन की जुताई कर रहा था, तो पीडब्ल्यू 1 मेड़ पर खड़ा था व पीडब्ल्यू 2 व 3 जमीन को खाद दे रहा था। इस बारे में पता चलने पर अपीलार्थीगण और अभियुक्त संख्या 5 व 6 (जो दोषमुक्त हुए) आए और अपीलार्थीगण के कब्जे वाली भूमि की जुताई का विरोध किया। अभियोजन पक्ष का आरोप है कि अपीलार्थी संख्या 1 से 4 के पास कुदाल, सब्बल, छूरी वगैरह थे जबकि अभियुक्त संख्या 5 और 6 निहत्थे आए थे। यद्यपि मृतक ने भूमि की कीमत चुकाने की पेशकश की फिर भी अपीलार्थी संख्या 1 ने मृतक को भूमि जोतने से रोक दिया। अभियोजन पक्ष का मामला यह है कि उसके बाद अपीलार्थी संख्या 1 से 4 ने मृतक पर हथियारों से हमला किया जबकि अभियुक्त संख्या 5 व 6 ने मुक्कों से प्रहार किया। जब गवाह संख्या 1, 2, 3 व सिकामनी ने मृतक को बचाने के लिए हस्तक्षेप किया तो उस पर भी हमला किया गया। अपीलार्थी संख्या 1 और अभियुक्त संख्या 5 व 6 ने सिकमनी पर हमला किया। गवाह संख्या 2 पर भी इसी तरह अपीलार्थी संख्या 1, 3 व 4 ने हमला किया जबकि अभियुक्त संख्या 5 व 6 ने मुक्के मारे। गवाह संख्या 3 (पीडब्ल्यू 3) को अपीलार्थी संख्या 1, 2 व 3 ने पीटा जबकि पीडब्ल्यू 1 को सभी अपीलार्थीगण ने व अभियुक्त संख्या 5 व 6 (जो बरी हुए) ने मारा। मारपीट के कारण पीडब्ल्यू 1, 2, 3 व

मृतक जयवेलु को खून आलूदा चोटें आईं और वे गिर पड़े। गवाह पीडब्ल्यू 6 जो मृतक की पुत्री है, जो घटनास्थल से थोड़ी दूर पर थी, ने अभियुक्तगण को अपने-अपने हथियारों के साथ भागते देखा और घायलों को खून से लथपथ घायल जमीन पर पड़े देखा। उसने गवाह पीडब्ल्यू 4 व एक अन्य व्यक्ति की मदद से घायलों को राजकीय अस्पताल वेल्लोर में भर्ती कराया।

चिकित्साधिकारी गवाह पीडब्ल्यू 12 ने राजकीय अस्पताल वेल्लोर में घायलों का परीक्षण किया। उन्होंने सुबह लगभग 9:15 बजे मृतक की जांच की उनकी रिपोर्ट प्रदर्श पी 13 है। गवाह पीडब्ल्यू 1, 2 व 3 की भी उनके द्वारा क्रमशः जांच की गई जिनके चोट प्रतिवेदन क्रमशः प्रदर्श पी 22, पी 17, पी 19 है। यह विवादित नहीं है कि भर्ती होने के अतिशीघ्र जयवेलु की मृत्यु हो गई। मृत्यु के पश्चात्, मृत्यु की सूचना प्रदर्श पी 15 पुलिस चौकी व गवाह पी 17 सबइंस्पेक्टर को भेजी गई जिसने अस्पताल में आकर गवाह पीडब्ल्यू 1 के बयान प्रदर्श पी 1 लिए, जिसके आधार पर एफआईआर (प्रथम सूचना रिपोर्ट) प्रदर्श पी 2 अपराध संख्या 76/91 दर्ज हुई।

यह भी मालुम हुआ कि उपनिरीक्षक जो गवाह पीडब्ल्यू 17 है ने उसी अस्पताल में इलाजरत, अभियुक्त संख्या 2 को पाया। अपीलार्थी संख्या

2 ने भी अपनी शिकायत पीडब्ल्यू 17 को अपराध संख्या 77/91 के रूप में अंतर्गत धारा 147, 323 भा0द0स0 में दर्ज कराई। गवाह पीडब्ल्यू 18 जो पुलिस निरीक्षक था जो मामले का अनुसंधान स्वयं के जिम्मे लिया और अन्त्य परीक्षण रिपोर्ट बनाई गवाह पीडब्ल्यू 13 डॉक्टर ने मृतक जयवेलु के शव का परीक्षण कर पोस्टमार्टम रिपोर्ट प्रदर्श पी 24 बनाई।

दिनांक 21.04.1991 को लगभग 3:00 बजे प्रातः अपीलार्थी संख्या 3, 4 व अभियुक्त संख्या 5 व 6 (जो बरी) को गिरफ्तार किया गया और यह कहा गया कि अपीलार्थी संख्या 4 व 5 द्वारा दिए गए स्वैच्छिक कथनों के आधार पर बरामदगी की गई। अभियोजन पक्ष का कथन है कि अपीलार्थी संख्या 1 ने 25.4.1991 को सुबह 10:00 बजे लगभग गवाह पीडब्ल्यू 9 के समक्ष न्यायिकेतर संस्वीकृति प्रदर्श पी 11 की और बाद में करीब 12:00 बजे दिन में गवाह पीडब्ल्यू 9 ने उसे पुलिस के समक्ष पेश किया। यह भी निर्विवादित है कि अभियुक्त संख्या 2 जिस अस्पताल में इलाजरत था वहां से न्यायिक रिमाण्ड पर भेजा गया।

अनुसंधान के दौरान अभियुक्तगण व अभियोजन के गवाहों के बयानों के आधार पर बरामद हथियार रासायनिक परीक्षण के लिए भेजे गए। यह प्रकट हुआ कि सिकमनी व पीडब्ल्यू 1 के कहने पर बरामद हथियार पर 'ओ' ग्रुप का मानव रक्त से सना हुआ था। इसी प्रकार गवाह पीडब्ल्यू 3 के

बताए अनुसार बरामद हथियार पर 'बी' गुप का मानव रक्त और जो गवाह पीडब्ल्यू 2 के बताए अनुसार हथियार बरामद हुआ पर 'ओ' गुप का मानव रक्त पाया गया।

विचारण के दौरान अपीलार्थी संख्या 1 ने धारा 313 द०प्र०स० के तहत परीक्षण के दौरान कथन किया कि विवादित भूखण्ड विगत पचास वर्षों से उसके परिवार के कब्जे व उपभोग में थी। यह ज्ञात होने पर, कि मृतक ने विवादित भूमि खरीद ली है उसने सिविल वाद संख्या 05 नं. 968/84 मुंसिफ न्यायालय वेल्लोर के समक्ष मृतक के विरुद्ध प्रस्तुत किया व अपने कब्जे की रक्षा करते हुए निषेधाज्ञा का आदेश प्राप्त किया। जहाँ तक पंचायत का सम्बन्ध है, अपीलार्थी संख्या 1 का मामला था कि जयवेलु ने विक्रय विलेख निष्पादित नहीं किया यद्यपि अपीलार्थी संख्या 1 ने गैर न्यायिक स्टाम्प वगैरह पेश किए थे। हालांकि जयवेलु (मृतक) ने न केवल भूमि बल्कि शेष फसल को भी नुकसान पहुँचाने का प्रयास किया। उनके विरोध करने पर जयवेलु (मृतक) ने अपीलार्थी संख्या 2 से 4 हमला किया। अपीलार्थी संख्या 2 से 4 का भी यही कथन रहा।

अभियोजन पक्ष ने अपने मामले को साबित करने के लिए कई गवाह पेश किए और विचारण न्यायालय में गवाह पीडब्ल्यू 1, 2 व 3 की साक्ष्य को स्वीकार करते हुए, अपीलार्थीगण को जयवेलु की हत्या व गवाह 1, 2 व

3 की चोटों का दोषी माना। तदनुसार उन्हें दोषी ठहराया और विभिन्न समयावधि के कारावास की सजा सुनाई जैसा की पहले बताया जा चुका है।

जैसा उच्च न्यायालय के समक्ष आग्रह किया गया था वैसा कि हमारे समक्ष आग्रह किया गया है, कि अभियोजन पक्ष हमलावर था और जो अपीलार्थी पचास वर्षों से भूमि पर काबिज काश्तकार, खातेदार था को बेदखल करने की कोशिश की। एक दिन पहले सांय को भी अभियोजन पक्ष ने उन्हें बेदखल करने का प्रयास किया लेकिन विरोध करने पर वे चले गए। घटना दिन उन्होंने फिर से विवादित भूमि की जुताई कर उन्हें बेदखल करने का प्रयास किया, जिस पर अपीलार्थीगण ने विरोध किया इस कृत्य ने अभियोजन पक्ष को अपीलार्थीगण पर हमला करने के लिए उकसाया, उनके शरीर के मार्मिक अंगों पर चोटें आईं अपने जीवन के लिए आसन्न संकट की आशंका में अपीलार्थीगण ने शरीर व संपत्ति की आत्मरक्षा के अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए, उनके हाथों में जो कुछ भी था, उससे अपना बचाव किया। चूंकि वादग्रस्त भूमि अपीलार्थीगण के कब्जे में थी इसलिए आपराधिक अतिचार का प्रश्न नहीं था और वास्तव में यह अभियोजन पक्ष था, जिसने उनकी भूमि पर आपराधिक अतिचार किया था। इसके अलावा अभियोजन पक्ष सारभूत तथ्यों को भी छिपाने का दोषी था। वह तीन अपीलार्थीगण के शरीर के मार्मिक अंगों पर आईं चोटों की

व्याख्या करने में विफल रहा और न्यायालय पर यह प्रभाव/छाप डालने की कोशिश की कि केवल अपीलार्थीगण ने उन पर हमला किया और यह कि उन्होंने कोई चोटें किसी को नहीं पहुंचाईं। वास्तव में अभियोजन पक्ष द्वारा प्रकट की गई घटना का तरीका अभियोजन पक्ष के मिथ्या मामले के समर्थन करने के लिए एक तोड़ मरोड़कर प्रस्तुत किया गया वृतांत था। इस प्रकार यह निवेदन किया गया कि अपीलार्थीगण दोषमुक्ति के हकदार हैं।

उच्च न्यायालय ने इस तथ्य पर ध्यान दिया कि सिकमनी जो घटना में घायल हुआ जिसे चश्मदीद गवाह कहा गया है को गवाह के रूप में परीक्षित नहीं कराया गया है। इसलिए उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी संख्या 1 व 4 को धारा 324 भा0द0स0 के तहत सिकमनी पर हमला करने बाबत दोषसिद्धि को अपास्त किया।

उच्च न्यायालय ने देखा कि पीडब्ल्यू 1 व 2 को एक-एक गम्भीर चोट लगी परन्तु पीडब्ल्यू 3 के साधारण चोटें थीं। यद्यपि वे आश्वस्त थे कि अपीलार्थीगण ने गवाह पीडब्ल्यू 1 लगायत 3 जिन्होंने अभियोजन के मामले में गवाही दी, के चोटें कारित की इसलिए उन्होंने भा0द0स0 की धारा 324 व 326 के तहत उनकी दोषसिद्धि व सजा को कायम रखा।

हालांकि उच्च न्यायालय ने पाया कि 447 भा0द0स0 के अन्तर्गत आपराधिक अतिचार का आरोप साबित नहीं हुआ। इसके विपरीत उच्च

न्यायालय ने पाया कि अपीलार्थीगण लम्बे समय से भूमि पर खातेदार काश्तकार के रूप में काबिज रहे। पक्षकारों के बीच दीवानी मुकदमा भी था और अपीलार्थीगण के पक्ष में निषेधाज्ञा का आदेश था। अपीलार्थीगण द्वारा प्रस्तुत दस्तावेज में संदेह से परे स्थापित था कि वर्ष 1985 तक वे विवादित भूमि के खातेदार काश्तकार के रूप में निश्चित कब्जे में थे। इन निष्कर्षों को दृष्टिगत रखते हुए उच्च न्यायालय ने अपीलार्थीगण को धारा 447 भा०द०स० के आरोप से बरी कर दिया, क्योंकि अभियोजन पक्ष यह स्थापित करने में विफल रहा कि जयवेलु (मृतक) के पास उसके द्वारा खरीदी गई भूमि के किसी भी भाग का कब्जा था।

उच्च न्यायालय ने धारा 302 व 302/34 भा०द०स० के आरोप के सम्बन्ध में अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी सं. 1 के पास जयवेलु द्वारा मुरुगेसा मुदलियार व सावित्री से खरीदी गई भूमि का सम्पूर्ण हिस्सा था। घटना से एक दिन पहले मृतक ने विवादित भूमि को जोतने का प्रयास किया था। जिसे अपीलार्थीगण ने सफलतापूर्वक रोका। अपीलार्थी संख्या 1 द्वारा पंचायत के निर्णय की पालना नहीं की गई और अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य से दर्शित था कि उभयपक्षों में विक्रय विलेख के निष्पादित नहीं करने के लिए एक-दूसरे पर आरोप प्रत्यारोपित लगाए थे। यह दर्शित करने के लिए भी कोई साक्ष्य नहीं था कि 1.83 एकड़ भूमि का कभी मीट्स और

बाउण्ड्स के आधार पर विभाजन होकर मृतक को कोई भाग आवंटित हुआ हो। इसलिए अपीलार्थीगण सम्पूर्ण भूखण्ड 1.83 एकड़ पर काबिज थे। अपीलार्थीगण द्वारा पहले दिन किए गए विरोध के बावजूद, मृतक ने 20.4.1991 की सुबह पुनः कब्जा करने का प्रयास किया। वह पीडब्ल्यू 1 लगायत 3 के साथ जाकर जमीन पर खेती करने लगा। अभियोजन पक्ष के सदस्यों द्वारा उनकी जमीन पर जुताई का अपीलार्थीगण ने विरोध किया। इसी पृष्ठभूमि पर यह घटना हुई जिसमें अभियोजन पक्ष व बचाव पक्ष दोनों के सदस्य घायल हुए।

अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर विचार कर उच्च न्यायालय ने स्पष्ट निष्कर्ष दिया कि जब घटना घटी तब अभियुक्तगण अपने कब्जे को बचाने की कोशिश कर रहे थे। पीडब्ल्यू 12 द्वारा तैयार किए गए चोट प्रतिवेदन से स्पष्ट था कि अपीलार्थी संख्या 2 से 4 के चोटें आईं। अपीलार्थी संख्या 3 दाहिने पैराइटल भाग में फटा हुआ घाव व बाँए पैर में नील। इसी प्रकार अपीलार्थी संख्या 2 के (लेफ्ट फ्रन्टल)) सिर के बाँए अग्र भाग पर फटा हुआ घाव अपीलार्थी संख्या 4 के पीठ पर दाहिनी पसली में चोट लगी थी। उच्च न्यायालय ने यह भी पाया कि अभियोजन पक्ष अपीलार्थी संख्या 2 और 4 के आई चोटों की व्याख्या करने में विफल रहा। इतना ही नहीं उप-निरीक्षक, पीडब्ल्यू 17 जिन्होंने अपीलार्थी संख्या 2 द्वारा दी गई शिकायत

उसी दिन दर्ज की थी, जिस दिन पीडब्ल्यू 1 की शिकायत दर्ज की थी। ने सत्र न्यायालय के समक्ष परिवाद को प्रदर्शित भी नहीं कराया था। उच्च न्यायालय ने पीडब्ल्यू 18 के द्वारा किए गए अनुसंधान की निष्पक्षता पर प्रतिकूल टिप्पणी की व यह पाया कि वह अनुसंधान से संबंधित पूरे रिकार्ड को न्यायालय के समक्ष रखते हुए बेहतर काम कर सकते थे। इसलिए उच्च न्यायालय ने कहा कि अनुसंधान एजेंसी सारवान रिकार्ड को रोकने का दोषी है, यदि वह रिकार्ड न्यायालय के समक्ष पेश किया जाता तो अभियुक्त के पक्ष में पैमाना झुक सकता है और इसलिए सारवान रिकार्ड को रोकने के लिए राज्य के खिलाफ एक प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

हमारे लिए मामले के इस पहलू पर आगे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। तथ्य यह है कि जब अभियोजन के घायल गवाहों को अस्पताल में भर्ती कराया गया उसी समय अपीलार्थी संख्या 2 का राजकीय अस्पताल वेल्लोर में इलाज चल रहा था। पीडब्ल्यू 17 ने गवाह पीडब्ल्यू 1 के बयान रिकार्ड किए उसके पश्चात् अपीलार्थी संख्या 2 के बयान लेखबद्ध किए। ये तथ्य संदेह के लिए कोई जगह नहीं छोड़ता है कि अभियोजन पक्ष के सदस्यों के साथ-साथ बचाव पक्ष भी उसी घटना के दौरान घायल हुए यद्यपि, अभियोजन पक्ष के गवाहों ने उन परिस्थितियों के बारे में, जिनमें अपीलार्थी संख्या 2 से 4 के चोटें आईं, किसी भी जानकारी से इनकार

किया। अभियोजन के गवाहों द्वारा बनाया गया मामला यह है कि अपीलकर्तागण ने उन पर हमला किया और इस बारे में एक ही शब्द नहीं कहा है कि क्या उन्होंने जवाबी कार्यवाही की थी। इन तथ्यों पर, उच्च न्यायालय में अभिनिर्धारित किया कि अपवाद 2 व 4 की आवश्यकताएं स्थापित की गई थी। उच्च न्यायालय ने तब निष्कर्ष निकाला कि यद्यपि अपीलार्थीगण अपवाद 2 का लाभ प्राप्त करने के हकदार हैं, परन्तु अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह स्पष्ट है उन्होंने अपने प्रतिरक्षा के अधिकार से बढ़कर कृत्य किया इसलिए उनका कृत्य धारा 304 भा0द0स0 के मापदण्डों के अन्तर्गत आता है।

तदनुसार उच्च न्यायालय ने अपीलार्थीगण की धारा 302 व 302/34 के तहत दोषसिद्ध को अपास्त किया परन्तु उसके बजाय उन्हें 304 भाग 1 सपठित धारा 34 के तहत दण्डनीय अपराध का दोषी पाया। उच्च न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि अभिलेख पर मौजूद सामग्री से यह स्पष्ट था कि चारों अपीलार्थीगण के मध्य क्षणभर में सामान्य आशय उत्पन्न हुआ और उस सामान्य आशय के अनुसारेण में मृतक व गवाहों पर हमला किया गया। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए कि अपीलार्थी संख्या 1 जो वर्ष 1990 में 70 वर्ष की आयु का था उच्च न्यायालय ने उसे 3 वर्ष का कठोर कारावास व 25,000/- रूपए जुर्माने के दण्ड से धारा

304 भाग 1 सपठित 34 भा०द०स० के तहत दण्डित किया व जुर्माना अदा करने में चूक होने पर 9 माह के कठोर कारावास से दण्डित किया। अपीलार्थी संख्या 2 से 4 को भी धारा 304 भाग 1 सपठित 34 के तहत दोषसिद्ध किया जाकर सात वर्ष के कठोर कारावास से दण्डित किया तथा विचारण न्यायालय द्वारा भा०द०स० की धारा 324 व 326 के तहत की गई दोषसिद्धि को बरकरार रखा परन्तु जहां भी सजा दो वर्ष से अधिक थी, वहाँ सजा को घटाकर दो वर्ष का कठोर कारावास कर दिया। सजाओं को एक साथ चलाए जाने के निर्देश दिए गए।

हम देखते हैं कि राज्य ने अपीलार्थीगण के धारा 302 व 302/34 भा०द०स० में दोषमुक्ति के खिलाफ कोई अपील नहीं की। उच्च न्यायालय ने अपने निष्कर्ष में यह माना कि अपीलार्थीगण अपनी संपत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का अतिलंघन किया, अपीलार्थीगण को धारा 304 भाग 1 सपठित धारा 34 में दोषसिद्ध व दण्डित किया। अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने सही तथ्य प्रस्तुत किया कि अपीलार्थीगण की मामले के तथ्यों के क्रम में धारा 304 भाग 1 सपठित धारा 34 भा०द०स० के तहत दोषसिद्धि पूर्णतः अवैधानिक है। उच्च न्यायालय ने पाया है कि अपीलार्थीगण ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करने में कृत्य किया, अपीलार्थीगण की धारा 34 की सहायता से दोषसिद्धि अनुचित थी।

हमारे मत में विद्वान अधिवक्ता के तर्कों में बल होने से स्वीकार किए जाने चाहिए।

यह सुस्थापित है कि यदि एक बार यह विनिश्चित कर देने पर कि अभियुक्तगण को प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार था और युक्तियुक्त आशंका थी कि यदि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग नहीं किया तो इसका परिणाम मृत्यु या गम्भीर उपहति होता। धारा 103 भा0द0स0 के तहत सम्पत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार स्वेच्छा से मृत्यु कारित करने तक, धारा 99 के प्रतिबन्धों के अधीन रहते हुए बढ़ जाता है। हस्तगत मामले में; यदि अपीलार्थीगण ने अपनी सम्पत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए कृत्य किया, तो यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने आपराधिक कृत्य सामान्य आशय के अग्रसरण में किया, चूंकि धारा 96 यह स्पष्ट करती है कि कुछ भी अपराध नहीं है जो प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग में किया जाता है। उनका कोई आपराधिक कार्य करने या ऐसा कुछ करने का इरादा नहीं था जिसे अवैध बताया जा सके। उनका उद्देश्य मृतक को मारना नहीं था, लेकिन अपनी सम्पत्ति की रक्षा करना था। यह हो सकता है कि हस्तगत मामले में रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर यह पाया जाए कि उनमें से कुछ ने निजी प्रतिरक्षा के अपने अधिकार का उल्लंघन किया हो और इसके लिए उन्हें व्यक्तिगत रूप से

जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता है कि अपराध को करने के सामान्य आशय के अनुसरण में हत्या की गई थी। बिहार राज्य बनाम माथुपाण्डे व अन्य एस.सी.आर. 1970 (1) 358 के मामले में कुछ ऐसी ही परिस्थितियां थी, जिसमें इस न्यायालय द्वारा इस प्रश्न पर विचार किया गया कि क्या अभियुक्त को भा०द०स० की धारा 302 सपठित 149 या धारा 34 के तहत दोषी ठहराया जा सकता है। यह विनिश्चित किया गया;-

“धारा 149 के प्रावधानों को आकर्षित करने के लिए अभियोजन पक्ष को यह स्थापित करना चाहिए कि एक विधि विरुद्ध जमाव था और जमाव के सामान्य उद्देश्य की पूर्ति में अपराध किया गया था। धारा 141 के चौथे खण्ड के तहत पांच या अधिक व्यक्तियों का जमाव एक विधि विरुद्ध जमाव है यदि इसके सदस्यों का सामान्य उद्देश्य आपराधिक बल के प्रयोग द्वारा या आपराधिक बल के प्रदर्शन द्वारा किसी अधिकार को या कथित अधिकार को लागू कराना है। धारा 141 को धारा 96 से 106 के साथ पढ़ा जाना चाहिए जो व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अधिकार से संबंधित है।, जो धारा 96 के तहत कोई भी बात अपराध नहीं है, जो प्राइवेट

प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग में किया जाता है। कानून द्वारा निर्धारित सीमाओं के भीतर प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का दावा धारा 141 के चौथे खण्ड में "किसी भी अधिकार या कथित अधिकार को लागू करने के लिए", अभिव्यक्ति के भीतर नहीं आ सकता है।"

इसलिए, यह इस बात को इंगित करता है कि अपीलार्थीगण का इरादा जयवेलु की मृत्यु कारित करना नहीं था, बल्कि उन्होंने अपने व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए कार्य किया था। व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए, अपीलार्थीगण द्वारा किया गया आपराधिक कृत्य सामान्य आशय से प्रेरित नहीं कहा जा सकता है। सामान्य आशय की प्रासंगिकता केवल अपराध के सम्बन्ध में है ना कि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के लिए।

सवाल अभी भी उठता है कि क्या अपीलार्थीगण को प्राइवेट प्रतिरक्षा के उनके अधिकार उल्लंघन करने के लिए दोषी ठहराया जा सकता है। हस्तगत मामले में हम यह मानने के लिए प्रवृत्त हैं कि अपीलार्थीगण ने शुरू में सम्पत्ति की व्यक्तिगत प्रतिरक्षा के अपने अधिकार का प्रयोग किया था, और बाद में व्यक्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग किया था। यह पाया गया है कि इस घटना में तीन अपीलार्थी भी घायल हुए थे।

अपीलकर्ताओं में से दो, अर्थात् अपीलार्थी संख्या 2 और 3 के सिर पर चोटें थी, जो शरीर का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था। सौभाग्य से चोटें घातक साबित नहीं हुईं। यदि अधिक बल लगाया जाता, तो इसका परिणाम खोपड़ी का फैंक्चर हो सकता था और चोट घातक साबित हो सकती थी। लेकिन जो बात स्पष्ट है वह यह तथ्य है कि सिर जैसे शरीर के महत्वपूर्ण हिस्से पर चोट मारी गई थी। इन परिस्थितियों में यह निष्कर्ष निकालना उचित है कि अपीलकर्ताओं को युक्तियुक्त आशंका थी कि मृत्यु या गंभीर चोट इस तरह के हमले का परिणाम हो सकती है। इसलिए, व्यक्तिगत प्रतिरक्षा का उनका अधिकार हमलावरों की स्वेच्छा से मौत का कारण बनने तक विस्तृत हुआ था।

हाँलाकि यह सच है कि निजी रक्षा के अधिकार का प्रयोग करने में केवल ऐसे बल का उपयोग किया जा सकता है, जो आवश्यक हो, लेकिन यह भी समान रूप से भली भाँति तय किया गया है कि जब किसी समय एक व्यक्ति को अपने या किसी अन्य के जीवन और अंग के आसन्न खतरे का सामना करना पड़ता है तब उसे तराजू में स्वर्ण तौलने के समान सटीक बल का प्रयोग कर खतरे को दूर करने की उम्मीद नहीं की जाती है। भले ही वह पलभर के आवेश में, एक शांत और नियंत्रित दिमाग द्वारा सटीकता व शुद्धता के साथ गणना करने पर, अपने बचाव को आवश्यकता से थोड़ा

आगे ले जाता है, कानून इसके लिए उचित अनुमति देता है। (देखें: मोहम्मद रमजानी बनाम दिल्ली राज्य; 1980 पूरक एस.सी.सी. 215)

राज्य की ओर से उपस्थित वरिष्ठ अधिवक्ता श्री बालकृष्णन ने अपीलार्थीगण की दोषसिद्धि का समर्थन चाहते हुए तर्क दिया कि अभियोजन पक्ष के सदस्यों ने पहले ही प्रश्नगत भूखण्ड पर अतिक्रमण कर लिया था और इसलिए अतिचार पूरा हो गया था। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि अपीलार्थीगण के पास भूखण्ड का कब्जा था। इस मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थीगण के तर्कों को अस्वीकार किया जाना चाहिए। मुंशीराम वगैरा बनाम दिल्ली प्रशासन, ए.आई.आर. 1968 एस.सी. 702 में इस प्रकार विनिश्चित किया गया है;

“यह सच है कि असली स्वामी सहित किसी को भी यह अधिकार नहीं है कि यदि अतिक्रमी भूमि के सुस्थापित कब्जे में है तो उसे बलपूर्वक बेदखल कर दे जब तक कि उसे कानून के अनुसार बेदखल नहीं किया जाता है, सही स्वामी के खिलाफ भी उसे कब्जे की रक्षा करने का हकदार है। लेकिन अतिक्रमण के छिटपुट या रूक-रूककर होने वाले कार्य असली स्वामी के खिलाफ ऐसा अधिकार नहीं देते हैं। जिस अधिकार का अतिक्रमणकर्ता सही स्वामी के खिलाफ

बचाव करने का हकदार है, अतिक्रमी जिस कब्जे की रक्षा करना चाहता है। वह, पर्याप्त रूप से लम्बी अवधि तक एक सुस्थापित कब्जा होना चाहिए और जिसे असली स्वामी द्वारा ऐसा कब्जा स्वीकार किया गया हो। कब्जा करने का आकस्मिक कार्य सही स्वामी के कब्जे को बाधित करने का प्रभाव नहीं रखेगा। सही स्वामी फिर से प्रवेश कर सकता है और खुद को बहाल कर सकता है बशर्ते वह आवश्यकता से अधिक बल का प्रयोग ना करें। इस तरह के प्रवेश को केवल कब्जे पर घुसपैठ के प्रतिरोध के रूप में देखा जाएगा जो कभी समाप्त नहीं होगा। अतिक्रमण के किसी एक कृत्य द्वारा किसी व्यक्ति का सम्पत्ति पर कब्जा, जब तक सुस्थापित कब्जे में तब्दील नहीं हो जाता है, एक विधि विरुद्ध जमाव का गठन करता है, भले ही वह वास्तविक स्वामी सम्पत्ति के वास्तविक कब्जे में नहीं था, वास्तविक स्वामी को आवश्यक बल प्रयोग कर बाधा को दूर करने का अधिकार देता है।”

यही सिद्धान्त पूरन सिंह व अन्य बनाम पंजाब राज्य, (1975) 4 एस.सी.सी. 5181 में दोहराया गया था।

उस मामले में उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित किए गए तथ्य यह हैं कि अपीलकर्ताओं के पास 50 से अधिक वर्षों से विचाराधीन भूखण्ड का कब्जा था। घटना से एक दिन पहले शाम को अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थियों को बेदखल करने का प्रयास किया था, लेकिन अपीलार्थियों के विरोध पर उन्होंने अपनी योजना को छोड़ दिया और पीछे हट गए। अगली सुबह उन्होंने फिर से खेत जोतकर और स्वामित्व के अधिकार का प्रयोग करके भूमि पर कब्जा करने का प्रयास किया। इस स्तर पर अपीलार्थी घटनास्थल पर उपस्थित हुए और विरोध किया, जिसके परिणामस्वरूप अंततः अभियोजन पक्ष के सदस्यों द्वारा उन पर हमला किया गया। इन तथ्यों में, उपरोक्त सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए, यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि अभियोजन पक्ष के सदस्यों के पास विचाराधीन भूमि का कब्जा था या अपीलकर्ताओं को अतिक्रमणकारियों को बेदखल करने और भूमि पर कब्जा करने के अपने अधिकार का दावा करने का कोई अधिकार नहीं था। निश्चित रूप से अभियोजन पक्ष "सुस्थापित कब्जे में नहीं था।

श्री बालकृष्णन ने तब कहा कि यह स्पष्ट नहीं है कि हमला किसने शुरू किया। अभियोजन पक्ष ने घटना की उत्पत्ति और उद्गम को दबाने का चयन किया और अदालत के समक्ष तोड़ मरोड़कर मामला प्रस्तुत किया। अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थियों को लगी चोटों के बारे में अनभिज्ञता का

नाटक किया। यह सुस्थापित है कि धारा 105 साक्ष्य अधिनियम के तहत आरोपी व्यक्ति पर अपने निजी बचाव की याचिका को स्थापित करने की जिम्मेदारी उतनी कठिन नहीं है जितनी कि अभियोजन पक्ष पर अपराध के हर घटक को उचित संदेह से परे स्थापित करने के लिए है, जिसका अभियुक्त पर आरोप लगाया गया है, इस मामले में हाँलाकि अपीलार्थियों को शरीर के महत्वपूर्ण हिस्सों पर चोटें लगी थीं, भले ही वे साधारण हों, लेकिन अभियोजन पक्ष ऐसी चोटों के लिए कोई स्पष्टीकरण देने में विफल रहा। राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता का निवेदन है कि चोटें साधारण होने के कारण, अभियोजन पक्ष इसके लिए कोई स्पष्टीकरण देने के लिए बाध्य नहीं था, हम स्वीकार करने के लिए सहमत नहीं हैं। मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अभियोजन पक्ष की ओर से अभियुक्तगण की चोटों की व्याख्या करने में चूक इस निष्कर्ष को निकाल सकती है कि अभियोजन पक्ष घटना की उत्पत्ति और उद्भव को छिपाने का दोषी है और इसलिए सही तथ्य प्रस्तुत नहीं किया था। यह सही हो सकता है कि अभियोजन पक्ष के गवाह एक सारवान बिंदु पर झूठ बोल रहे थे और इसलिए, खुद को अविश्वसनीय बनाते हैं, या यह हो सकता है कि अभियुक्तगण की चोटों की व्याख्या करने वाला बचाव पक्ष का वृत्तान्त शायद घटना का सही वृत्तान्त है जो निश्चित रूप से अभियोजन पक्ष के मामले पर गंभीर संदेह पैदा करता है। इन परिस्थितियों में और उच्च

न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए हम संतुष्ट हैं कि अपीलकर्ता, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि, अभियोजन पक्ष के सदस्यों द्वारा उन पर हमला किया गया था, अपने कब्जे के साथ-साथ अपने लोगों का बचाव करने में पूरी तरह से उचित थे। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए कि अभियोजन पक्ष द्वारा उन पर हमला किया गया जो अग्रेसर थे और जिन्होंने उस भूमि पर अतिक्रमण किया था जो अपीलार्थीगण के 50 वर्ष से अधिक समय से निरन्तर कब्जे में था। उन्होंने संपत्ति और व्यक्ति की निजी रक्षा के अपने अधिकार का उल्लंघन नहीं किया था क्योंकि तथ्य और परिस्थितियों स्पष्ट करती हैं कि हमलावरों द्वारा उन्हें मौत नहीं तो गंभीर चोट पहुंचाई जा सकती है, को एक उचित आशंका के रूप में, उचित ठहराती है।

इसके पश्चात् श्री बालकृष्णन ने राज्य की ओर से कहा कि अपीलार्थीगण, मामले के तथ्य व परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, उचित मार्ग चुनने के लिए प्राधिकारियों के पास जा सकते थे उनका निवेदन है कि उन्हें प्राइवेट प्रतिरक्षा का बिल्कुल भी अधिकार नहीं था। इस निवेदन को उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए स्पष्ट मत को ध्यान में रखते हुए खारिज किया जाना चाहिए, कि अपीलकर्ताओं के आत्मरक्षा के अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए काम किया लेकिन उस अंधकार को पार कर

गए। दुर्भाग्य से, उच्च न्यायालय ने इस बात पर विचार नहीं किया कि अपीलार्थीगण में से किसने आत्मरक्षा के अधिकार का उल्लंघन किया। इसके अलावा आत्मरक्षा के अधिकार का उदारतापूर्वक अर्थ लगाना चाहिए। यह मुन्शी राम बनाम दिल्ली प्रशासन (उपरोक्त) में विवेचित किया गया है:

“कानून की मांग यह नहीं है कि जिसकी सम्पत्ति बलपूर्वक कब्जे में ली जाती है वह सुरक्षा की मांग के लिए अधिकारियों के पास जाए। आत्मरक्षा का अधिकार एक सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति करता है और अधिकार का उदारतापूर्वक अर्थ लगाया जाना चाहिए। ऐसा अधिकार न केवल बुरे लोगों पर रोक लगाने में सहायक होगा बल्कि एक स्वतंत्र नागरिक में सही भावना प्रोत्साहित करेगा। मानव आत्मा के लिए इससे अधिक निम्न कुछ नहीं है कि खतरे का सामना होने पर भाग जाए”

हम यह पहले ही निर्धारित कर चुके हैं कि धारा 34 की मदद से दोषसिद्धि न्यायाचित नहीं है। उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष के अभाव में कि किस अपीलार्थी ने आत्मरक्षा के अपने अधिकार का उल्लंघन किया संदेह का लाभ सबको मिलना चाहिए।

एक बार यह अभिनिर्धारित हो जाने पर कि अपीलार्थीगण ने आत्मरक्षा के अधिकार से परे नहीं गए, यह तार्किक रूप से मानना चाहिए कि उन्हें आइपीसी की धारा 324 व 326 के तहत कमतर अपराधों का दोषी नहीं ठहराया जा सकता है, क्योंकि उसी संव्यवहार में आत्मरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए अभियोजन के कुछ गवाहों को चोटें पहुँचाई थीं।

परिणामतः अपील स्वीकार कि जाकर अपीलार्थीगण के विरुद्ध लगाए गए सभी आरोपों से बरी किया जाता है। अपीलार्थीगण की जब तक अन्य किसी मामले में आवश्यकता न हो, तत्काल रिहा कर दिया जाये।

अपील स्वीकार की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशल इंटेलिजेन्स टूल सुवास की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मीना अवस्थी (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए , निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा ।